व्यथा का सरगम

अमृत राय

हिन्दी ADDA

व्यथा का सरगम

है। गहरी। काली। नीरव। नि:स्तब्ध। केवल दूर पर कुत्तों के भूँकने की आवांज और कुछ गीदड़ों की। मनुष्य की आवांज तो गाने की एकाध कड़ी के रूप में कभी-कभी सुनाई पड़ जाती है, किसी रिक्शेवाले के किसी रोमांटिक फिल्मी गाने की एक कड़ी; वर्ना सन्नाटा।

पास के ही किसी घर से शहनाई का व्याकुल स्वर आ रहा है। शहनाई भी अजब बाजा है जो दुख-सुख दोनों में समान रूप से आदमी का साथ देता है। आज न जाने क्यों सुरेश्वर...

...मगर आप उसे क्या जानें। आपने शायद कभी उसे बीन बजाते नहीं सुना। जब वह आँख बन्द करके बीन के तारों पर अपनी उँगलियाँ दौड़ाने लगता है तो विश्वास ही नहीं होता कि यह सुरेश्वर जो सामने बैठा है, उसकी अभी उठान पर की उम्र है, उसने अभी कुल तीस बसन्त देखे हैं। उसके स्वरों से प्रवाहित होनेवाली व्यथा की उस सरिता में जिसने भी एक बार नहाया उसका रोम-रोम जैसे काँप उठा और उसे लगा मानो अनेक पतझर और शिशिर बजानेवाले की अस्थि और मज्जा में जाकर बस गये हों।

सुरेश्वर रेलवे के एक आफिस में क्लर्क है। रेलों की घड़घड़ाहट और फाइलों की थकान को अपनी बीन के स्वरों में बाँधकर उसने उन्हें नया ही रूप दे दिया है। दिन-भर की दौड़-धूप के बाद रात को यही उसकी शान्ति का निर्झर है, यही उसका सहारा है, कवच है, मानो यह न हो तो दफ्तर की फाइलें उसे खा जाएँगी। रात को अपना कमरा बन्द करके (जिसमें पड़ोसियों की नींद न खराब हो!) वह अकसर बड़ी देर तक बजाता रहता है। रात को इन घड़ियों का एकान्त उसे बहुत प्रिय है। वह चाहता है कि जल्दी ही सो जाएे जिसमें दूसरे रोज तक अपनी बीन में खोया रहता है और समझता रहता है कि किसी बिन्दु पर पहुँचकर घड़ी की सुइयाँ अचल हो गयी हैं।....

सो, आज न जाने क्यों सुरेश्वर का मन उदास है। शहनाई का वह पतला स्वर खंजर की तरह उसके दिल के अन्दर उतरता चला जा रहा है। एक अजीब-सी वेदना, एक अजीब-सा दर्द उसे अपने अन्दर समो रहा है। उसकी बीन आज खामोश है। आज तो वह बस सुन रहा है। शहनाई के स्वर की वह बंकिम कटार उसके अन्दर उतरती ही चली जा रही है। सुरेश्वर जानना चाहता है कि अपने उतार और चढ़ाव में वह उससे क्या कहना चाहती है, पीड़ा की वह कौन-सी अतल गहराई है जिसे छू लेने का उसने संकल्प किया है। शहनाई का स्वर उसके गहरे से गहरे मन में एक अत्यन्त सुन्दरी पार्वत्य युवती का आकार ग्रहण कर रहा है। यह युवती किसी क्रूर दैत्य द्वारा शापित है, उसका सखा खो गया है, उसके परिजनों ने उसे छोड़ दिया है और उसे अकेले ही अपनी व्यथाओं का पर्वत ढोना है। उसकी मुखश्री तुहिनस्नात मटर के फूल के समान है, उसके कपड़े हिम के सदृश धवल हैं। पर उसकी मुखमुद्रा को जैसे किसी गहरी उदासी का धुआँ लग गया हो।

...शहनाई के स्वर को इस मानव-चित्र में बदलकर सुरेश्वर उसी को देखता हुआ खोया-सा, ठगा-सा बैठा था। हठात् जैसे किसी ने उसके कन्धे पकड़कर उसे झझोड़ा और होश में ला दिया। और तब उसे पता चला कि वह अपने-आपको छल रहा था। जो मानस-चित्र उसकी आँखों के आगे आ रहा है वह शहनाई के स्वर का चित्र नहीं है, मांस-मज्जा की एक वास्तविक तरुणी का चित्र है जिसे उसने आज ही शरणार्थियों की गाड़ी से उतरते देखा है। वह हजारा जिले की एक सीमान्तदेशीय हिन्दू पठान तरुणी का चित्र है...जब शहनाई ने किसी भयानक दर्द को अपने स्वरों में बाँधने की कोशिश की तो वह व्यथा-सुन्दरी आपसे-आप उसकी आँखों के आगे आ गयी, समुद्र के फेन से निकलती हुई वीनस के समान...

...हाँ, सचमुच वीनस...उर्वशी...तक्षशिला की सुन्दरी...सरो के पेड़ की-सी सुघड़ लम्बाई, स्वस्थ यौवन से भरपूर छरहरा शरीर, सीमांत के कागजी बादाम जैसी ही आँखें, चन्दन-सा गौर, सुसंस्कृत मुखमंडल, लम्बी-सी वेणी। मगर सबके ऊपर अंगराग के स्थान पर उदासी का एक गहरा लेप जो चेहरे के भाव को आमूल बदल देता है। उसे देखकर कोई उच्छृंखल भाव जैसे पास पर भी नहीं मार सकता; देखने के साथ ही उसे लगातार देखते रहने की इच्छा होती है, एकटक, मगर उसके साथ ही साथ पूरे वक्त जैसे कोई भीतर बैठा एक बड़ी तकलींफदेह कड़ी गुन-गुनाता रहता है...

सुरेश्वर ने आज ही तो उनके रहने की जगह देखी। धन्य भाग जो दूसरा महायुद्ध हुआ, वर्ना न लड़ाई होती, न मिलिटरी की बारकें बनतीं और न आज मनुष्य की पशुता से भागकर शरण माँगनेवालों को टिकने का कहीं कोई ठिकाना होता! शरणार्थियों को ये बनी-बनायी बारकें यों मिल गयी गोया इन्हीं के लिए बनाई गयी हों। इन्हीं बारकों में अपने घरबार, खेती-किसानी, दुकानदारी से उखड़े हुए लोग अपना सारा सामान लिये-दिये पड़े थे। टीन के बड़े बक्स, मँझोले बक्स, छोटे बक्स, खाटों के पाये-पाटियाँ, सुतली या बाध, सब अलग-अलग मोड़कर रखी हुई; चटाइयाँ, एकाध बाल्टी, लोटा, थाली, कनस्तरकिसी-किसी के पास अपना हु€का भी। यही उनकी सारी गिरस्ती थी। इसी गिरस्ती के घिरे-बँधे वे इस नई दुनिया में अपने लिए जगह बना रहे थे। बीविया कुएँ से पानी ला रही थीं या रोटी पका रही थीं और बच्चे धूल में सने, कुछ सहमे-सहमे-से खेल रहे थे, लोहता की खाक का मिलान हजारा की खाक से करके यह पता लगा रहे थे कि पशुता के कीटाणु कहाँ ज्यादा हैं और अपने जेहन से उन डरावनी शक्लों को निकालने की कोशिश कर रहे थे जिन्होंने उनकी नादान जिन्दगी को भी चारों तरफ से डर की रस्सियों से कस दिया था।

यहीं इसी नई दुनिया में उस शाम को सुरेश्वर ने उस व्यथा-सुन्दरी को हलके-हलके रोटी सेंकते देखा था...

...और उसकी विपत्ति की कहानी सुनी थी एक ऐसे आदमी से जो बन्नो की पुरानी दुनिया में भी उसका पड़ोसी था और आज इस नई दुनिया में भी, जिसकी दीवार उठ ही न पाती थी, क्योंकि वह आदम के बच्चे को हाड़तोड़ ईमानदार मेहनत की पुख्ता नींव पर नहीं बल्कि पब्लिक की दया की थोथी भुस-भुसी नींव पर आधारित थी। सुरेश्वर के यह पूछने पर कि उन्हें यहाँ कैसा लगता है, जिला हजारा की रहनेवाली उस व्यथा-सुन्दरी बन्नो के पड़ोसी उस अधेड़ आदमी ने जो बात कही थी वह सुरेश्वर को भूलती नहीं 'किसी की भीख के टुकड़े पर जिन्दा रहने से ज्यादा लानत की बात दूसरी नहीं होती, बाबूजी!' उसी से सुरेश्वर को यह भी पता लगा था कि बन्नो की शादी हाल ही में हुई थी, उसी गाँव में, जब कि मारकाट शुरू हुई। उसके आदमी को कातिलों ने नेजा भोंककर मार डाला और इसे उठाकर ले गये। फिर बन्नो ने वहाँ क्या देखा और कैसे एक रात जान पर खेलकर वह भाग निकली और छुपते-छुपते दूसरे भागनेवालों के संग जा मिली, इसकी एक काफी साहसिक कहानी थी।

वह अधेड़ आदमी जब शाम के धुँधलके में एक छोटी-सी चारपाई पर बैठा वह किस्सा सुना रहा था, उस वक्त उसकी नायिका बन्नो इतने भयानक अनुभवों, पीड़ाओं और साहस को अपने उस नाजुक शरीर में समेटे खामोशी के संग रोटियाँ सेंक रही थी। उसी खामोशी से अपनी तकलीफों को सहते-सहते वह कुछ-कुछ विक्षिप्त-सी हो गयी थी, बोलने या हँसने में भी अब शायद उसे तकलीफ होती थी। उस दुनिया की तमाम और चीजों के संग जिनमें उसकी असमत और उसका पहरेदार भी था, उसका बोलना और हँसना भी जलकर राख हो गया था। पाँच हंजार या पचास हंजार साल पहले आये भूडोल में उसकी जिन्दगी के बिना पलस्तर के, टूटे हुए मकान में (अभी उसकी शादी को हुए ही कै दिन हुए थे!) उसकी उमंगों के पंछी भी जहाँ-तहाँ मरे पड़े थे; जो कभी सर्द लाशें थीं वही अब ठठरियाँ हो गयी थीं और शीशे की तरह चमकीले किसी पत्थर में गोया हँसी बीच में ही रुक गयी थी, मुँह खुला का खुला ही रह गया था।

बारक के पास ही कुआँ था। कुएँ के पास ही एक कोठरी-सी थी। पता नहीं, लड़ाई के दिनों में वह किस काम में आती थी, अब तो वह खाली पड़ी रहती है, लड़के दिन के वं€त उसमें लुकते-छिपते हैं।

आज शाम के साढ़े सात बजे उसमें अचानक बड़ी जान आ गयी थी। बन्नो पानी भरने गयी तो थोड़ी दूर पर ही उस कोठरी से उसे किसी के चीखने या चीख के जबर्दस्ती रूँध

दिये जाने की हलकी-सी आवांज आयी, हलकी मगर पैनी। कुछ मर्द आवांजों की फुसफुसाहट भी उसके कानों में पड़ी। उसने तय किया कि पता लगाना चाहिए। पानी लेकर लौटी। पानी रखा। एक ताक पर से अपना खंजर उठाया और चली।

वह कोई दस गज की दूरी पर रही होगी जबकि कोठरी में से किसी आदमी ने कुछ खोजने के लिए एक दिया-सलाई जलायी जो भक् से बुझ भी गयी।

बन्नो ने देखा कि चार-पाँच आदमियों ने एक नौजवान लड़की को ंजमीन पर दाब रखा है, लड़की चित लेटी हुई है या लिटायी हुई है, उसके तन पर एक भी कपड़ा नहीं है, दो-तीन जवान उसके हाथ-पाँव कसे हुए हैं और वह मादरजाद नंगी लड़की छटपटा रही है...

कुछ खास जोशीले 'शरणार्थी' नौजवानों के एक गिरोह ने आज शिकार किया था। उनका ंखून भी खून है, पानी नहीं, उन्हें बदला लेना आताहै, वह अपनी जिल्लत का बदला लेंगे, अपने धर्म की किसी लड़की की लुटी हुई अस्मत का बदला वो दुश्मन की लड़की की अस्मत लूटकर चुकाएँगे।

पास के एक गाँव से पाँच-छ: नौजवान कुछ चोरी और कुछ सीना-जोरी (यानी एक-दो आदमियों को घायल करके) एक लड़की को उठा लाये थे और इस वं€त बारी-बारी से उसकी अस्मत लूटकर न सिर्फ अपने वहशीपन को खुराक पहुँचा रहे थे बल्कि उसके साथ-ही-साथ अपनी कौम की खिदमत भी कर रहे थे।

एक लमहे को जो दियासलाई जली थी उसमें बन्नो ने इन कौम के खादिमों को अपने कर्तव्य में रत देख लिया।

उसे बात समझने में जरा भी देर नहीं लगी। एक तो स्थिति यों ही दियासलाई की लाल-सी रोशनी में इनसान की हैवानियत की तरह स्पष्ट थी, दूसरे बन्नो...उसे भी €या कुछ बतलाने की जरूरत थी। वह जो कि खुद ऐसे ही एक नाटक की नायिका रह चुकी थी!

बन्नो के भीतर बैठे हुए पशु की आत्मा को गम्भीर सन्तोष मिला, गहरी तृप्ति का सुख...इसे ऐसे ही चीर डालना चाहिए...इसी का खुदा उन जानवरों का भी खुदा है...इसे यों ही चीर डालना चाहिए...

बन्नो के भीतर ही भीतर पैशाचिक उल्लास की लहर दौड़ गयी।

मगर कोई डेढ़-दो मिनट के अन्दर ही एक विचित्र मरोड़ के साथ एक दूसरी लहर उठी .साँप काटने पर आदमी को जो लहर आती है वह लहर, उसमें झाग निकलती है!

बन्नो को लगा कि जैसे वह एक बड़े आईने के सामने हो। जो लड़की जमीन पर मादरजाद नंगी, चित लेटी है वो वही है, बन्नो, उसी को आधी दर्जन बाँहें जमीन से चिपकाये हुए हैं और भेड़ियों जैसी भूखी-भूखी ये आँखें वही हैं जो पहले भी उसे यों ही घूर चुकी हैं...

'कौन है, कौन है, यहाँ €या हो रहा है?' चिल्लाती हुई वह खंजर हाथ में लिए तेजी से कोठरी में दांखिल हुई। अन्दर खलबली मच गयी। एक-दो ने पहले भागने की कोशिश की, मगर फिर सबने यही तय किया कि देखना चाहिए मांजरा €या है, हमारे काम में खलल डालनेवाला यह कौन-सा शैतान जमीन पर उतर आया।

बन्नो ने एक-दो जवानों पर हमला किया, मगर वे सधे हुए खिलाड़ी थे, बच गये और बन्नो की तरफ लपके कि उसके हाथ से खंजर छीन लें, मगर इसके पहले कि वे ऐसा कर पाएँ, बन्नों ने बिजली की तेजी से दौड़कर उस लड़की के पेट में खंजर भोंक दिया था और वही खंजर अपने सीने में चुभा लिया था

—— X ——